"गीताश्री द्वारा रचित कहानी संग्रह 'लेडीज़ सर्कल' का समाजशास्त्रीय अध्ययन।"

शोधाछात्र: शुभम् मोंगा,
महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय,
रोहतक (हरियाणा)

आज का समय तेजी से बदल रहा है और उसके साथ-साथ समाज भी सभी स्तरों पर परिवर्तित हो रहा है। यह परिवर्तन समकालीन हिंदी कहानी लेखन में भली भांति देखा जा सकता है। आलोचक 'राकेश बिहारी' भी लिखते हैं-"उदारीकरण और भूमंडलीकरण के नाम पर नब्बे के दशक में जिन संरचनात्मक समायोजन वाले आर्थिक बदलावों की शुरुआत हुई थी, उसका स्पष्ट और मुखर प्रभाव आज जीवन के हर क्षेत्र में देखा जा सकता है।"[1].

आज के उपभोकतावाद और बाजारवाद से निरंतर विघटित होती मानवीय अस्मिता और उत्तर आधुनिक समय में सहज होना बहुत ही कठिन है। आज हमारे चारों ओर सत्ता एक भयावह वातावरण तैयार कर चुकी है, जहां अपनी ज्ञानंनेद्रियों की उपादेयता को, अपनी चेतना की सत्यता को और अपने हृदय की संवेदना को ज्यों का त्यों बनाए रखना और उसके अनुरूप निर्णय लेना एक दुष्कर कार्य तो है ही साथ में सत्ता की नजरों में एक कठोर दंडनीय अपराध भी बन चुका है। कथाकार गीताश्री द्वारा रचित कहानी संग्रह 'लेडीज़ सर्कल' खुद से किए गए सवालों का ज़खीरा है जो मानव मन का सहज उद्गार प्रस्तुत करता है। उनकी सभी कहानियों के पात्रों के जीवन में जो कुछ भी घटित हो रहा है, वह उनका मनोवैज्ञानिक ढंग से विश्लेषण करती है। वो अपनी कहानियों में आज के समय की विसंगतियों का चित्रण प्रस्तुत करती है।

'पुरुषोत्तम अग्रवाल' लिखते है कि "अपनी तमाम सीमाओं-संभावनाओं के साथ हमारा वर्तमान राष्ट्रीय आत्मबोध उन्नीसवीं सदी के भद्रलोक के आत्म-मंथन का ही परिणाम है। इसलिए उस आत्म-

मंथन की प्रवृत्तियों, जटिलाओं और चुनौतियों से टकराना आज भी आवश्यक है।"[2].

इस कहानी संग्रह में गीताश्री आत्म-मंथन कर इस समय के परिवर्तित बोध से टकराती है। कभी यह संघर्ष-बोध चिराग मे लिपटी चिट्ठी में प्रेम की इबारत बनकर आता है, तो कभी उस मां की शक्ल का रूप अख्तियार करके, जिसका बेटा सालों पहले यूनिवर्सिटी से लापता हो गया था। कैसा होगा उस मां का बेटा ? जिंदा भी होगा या मार दिया गया होगा ? इस भयावह माहौल में लेखिका द्वारा उस बंद कमरे से आती आवाज को सुनना उसी सहजता को पा लेने जैसा ही है। वो यहां देख रही है कि कैसे सत्ता उस लड़के का आखेट करके शतरंज की बिसात पर अपने ही मोहरों को सेट करके, उसके साथ शह और मात की बाजी खेल रही है।'आवाज दे कहां है' कहानी में समाज के आईने में लेखिका देखती है कि "कोई हत्याओं को जस्टिफाई कर रहा है, जैसे कुछ हत्याएँ जायज होती हैं।"[3]. इस तरह के कितने ही प्लांड-मर्डर हमारे आसपास होते रहते हैं। वहां जब कोई बंद कमरे से हमें मदद के लिए पुकारता है, तो उसकी आवाज मैं जीवन का वह सत्य छुपा होता है जो कि उस समय,उस पीड़ित व्यक्ति की सहज अभिव्यक्ति है; पर हम अपनी आंख-कान मूंदे यूं ही निष्क्रिय बने रहते हैं। यहां इस कहानी में लेखिका उस बंद कमरों से आने वाली आवाजों को अपनी अभिव्यक्ति में स्थान दे रही हैं,चाहे वो आवाज बंद कमरे मे गीत गाते पात्र 'शाहिद अब्बास' की हो या रेप विक्टम रही 'शाल्वी' की। वे सभी आवाजें एक अहम पात्र बनकर उनकी कहानियों को गढ़ रही हैं।

आज का राजनीतिक परिदृश्य भी अपने भीतर अनेक विसंगतियाँ लिए है। आलोचक 'रोहिणी अग्रवाल' लिखती हैं- "राजतंत्र में व्यक्ति गायब है। वहाँ वह प्रजा बनकर अपनी रिरियाहट के साथ राजा को अधिनायक की बर्बरता और उदंडता देता चलता है।"[4]. आज जब हमारे सभी काम सत्ता के भय से ही परिचालित होते है, तो ऐसे में सत्ता का भय हम पर हावी होने लगता है। आज के समाज में मनुष्य इस भय

को प्रतिदिन सहता है।यह कहानी संग्रह में आम जीवन में साधारण मनुष्य के साथ मानसिक और भावनात्मक स्तर पर होने वाले टॉर्चर का एक सुदीर्घ और सुचिंतित विश्लेषण है।लेखिका इस भय को पहचानने के साथ अपनी कहानियों में उनका निदान भी बेखौफ अभिव्यक्त करती चलती हैं। प्रत्येक कहानी आम मनुष्य के जीवन से लुप्त होती सहजता का व्याख्यान भर ही नहीं है, बल्कि समाज में सभी स्तरों पर उस सहजता को पुनःस्थापित करने की पैरवी करती भी नजर आती हैं, इसलिए ही तो लेखिका 'स्त्री-पुरुष' को विपरीत युग्म समझने की बजाय 'मनुष्य' जैसे सहज शब्द में उन दोनों की अस्मिता को सम्मान स्वतंत्र इकाई के रूप में प्रतिष्ठित करती हैं। इन कहानियों में इसी सहजता को समझने की कोशिश की गई है कि सत्ता के इस दुष्चक्र से ना तो पुरुष बच पाया है और ना ही स्त्री। दोनों समान रूप से पीड़ित हैं और अपनी मुक्ति की गुहार लगाते हुए,अपने अंतर्मन की गुफाओं में छिपी पीड़ा को उजागर करने के लिए समान रूप से बेचैन भी हैं। यह संग्रह स्त्री-पुरुष दोनों की इस बेचैनी की ही मार्मिक आवाज है। वो खुद भी कहती भी है कि "यह मनोरंजक कथाएं नहीं है, यह यथार्थ के आभासीय सत्य के सहारे उस में तोड़फोड़ करते हुए हमारे समय के सच को सामने ला रही हैं।"[5]. 'जीरोमाइल' कहानी की पात्र राजवंती आर्थिक रूप से दृढ़ होना चाहती है। वह कहती है कि "एक-एक पैसे के लिए आपके आगे हाथ नहीं फैलाएंगे। मेरे हाथ भीख मांगने के लिए नहीं बने हैं।"[6]. और वह निर्णयसंपन्न स्त्री का भी बिंब रचती है, जो स्त्री स्वाबलंबन की पहली मांग है। राजवंती कहती है कि "हमारी जिंदगी है इसका फैसला हम करेंगे, आप लोग नहीं।हम लोग कुछ गलत काम नहीं करने जा रहे हैं।"[7].

आज का मध्यवर्ग के सामने परेशानियाँ पहले से ज्यादा हो गई है।वह अपनी स्थिति को बेहतर बनाने के लिए बहुत संघर्ष कर रहा है।इसी स्थिति पर विचार करते हुए आलोचक "विनोद तिवारी" कहते हैं-"आज जब मध्यवर्ग का अधिकांश हिस्सा ऐसे 'कास्मोपोलिटन' समय में रह रहा है जिसमें उसकी कोई एक 'आंईडेंटिटीज़' नहीं हैं,वह 'मल्टिपल

आइडेंटिटीज' मे रहने को ही स्मार्टनेस मानता है,ऐसे में पहचान की मुश्किलें और बढ़ जाती है।"[8]. ऐसे समय में लेखिका प्रभावी ढंग से परत दर परत अपने पात्रों के सहारे अपने समाज के मनोवैज्ञान का भी अध्ययन बखूबी करती हैं और फिर उससे प्रभावित अपने सामाजिकता को भी पुनः विश्लेषित करती हैं। वे जानती हैं कि आर्थिक रूप से स्वतंत्र और निर्णयशक्ति सम्पन्न स्त्री ही अपने व्यक्तित्व को उभारकर स्त्री-सशक्तिकरण की पैरवी कर सकती है,तभी वह अपनी इस पात्र को इस अदम्य चेष्ठा के साथ गढ़ रही हैं और उसके इस मुक्तिमार्ग में एक ऐसे पुरुष की चाहना भी कर रही है,जो मित्र बनकर उसे भावनात्मक रूप से समझे और सच्ची आत्मा से उससे का साथ भी निभाए और इस कहानी में उसका साथ निभाता है पुरुष पात्र "मुकेश", तभी अंत में उसे वह कहती है भी कि "मुझे तुम जैसे साथी की हमेशा जरूरत है।"[9].

इस विघटनशील समय में साहित्य का दायित्व पहले से ज्यादा बढ़ जाता है कि वो समाज में सकारात्मक चेतना का प्रसार करे।साहित्य के माध्यम से ही समाज उन्नति करता है,तो ऐसे में समकालीन कहानी की उपादेयता अधिक प्रबल हो जाती है।आलोचक "रोहिणी अग्रवाल" लिखती है कि"कहानी की सार्थकता संवाद का पुल मजबूत बनाने में है । कई बार इस पुल से गुजरकर यथार्थ जगत की यथार्थ ठोस वास्तविकताएँ या संवेगों से रची गई अमूर्त संकल्पनाएँ कहानी के समानान्तर यथार्थ जगत में प्रविष्ट होते ही रंग और चोला बदल लेती हैं।"[10].

गीताश्री की कहानियों में ये सभी संकल्पनाएँ यथार्थ जगत में सहज रूप से प्रविष्ट होती दिखाई पड़ती हैं।कहानियों के सभी पात्र,चाहे वो पुरुष हो या स्त्री,अपने देहबोध से ऊपर उठकर एक ऐसे साथी को प्राप्त करना चाहते हैं,जो उनके सुनहरे सपनों को एक खुला आसमान दे। सभी कहानियों के पात्र एक ऐसे ही साथी की तलाश में है,जो सहजता से उनका साथ निभाए। "एकांत" कहानी की पात्र शाल्वी;आशीष में यह गुण नहीं पाती।जब उसे सबसे ज्यादा आशीष के साथ की

जरूरत थी,तो वह उसे इस दुखद स्थिति में अकेला छोड़कर विदेश जा बसा;तब वो अपना संपूर्ण जीवन एक कमरे में ही बंद कर खुद को यंत्रणा देना आरंभ कर देती है।कहानी "पीली डायरी" का पात्र साहनी भी अपनी प्रेमिका की मृत्यु से अब तक उबर नहीं पाया है।वह उसकी अनुपस्थिति को स्वीकार नहीं कर पा रहा तो वह अनजान स्थानों की यात्रा में दर-दर भटक रहा है,बिलकुल वैसे ही जैसे "परी हो,बला हो,क्या हो तुम" कहानी का पात्र "आकर्ष।उसे भी अनजान देश में "जैनब" का साथ तो मिला पर कुछ ही समय के लिए...शेष रह गई तो बस उसकी यादें और वह चिराग ,जो ताउम्र उसकी उपस्थिति का सूचक बन कर;उसके हृदय में सांसे लेता रहेगा।कहानी "अन्हरिया रात बैरनिया हो राजा" की पात्र "कामिनी" भी अपने पति के दूर शहर जाने से उग्र उन्मादक हो गई है।हिस्टीरिया रोग की शिकार वह स्त्री,सामाजिक अंधविश्वास के चलते मानसिक रूप से विघटित पात्र में लोगों के द्वारा तब्दील कर दी गई है।उसके हृदय मे कभी किसी ने उतरने की कोशिश नहीं की है। वह तो बस "काई के नीचे पानी को साफ करना चाहती थी,वह नदी बनकर रहना चाहती थी।"[11].

स्त्री अपने तलघर में भावनाओं का एक समुद्र लेकर चलती है और उसके तलघर से भावनाओं का एक अंश उठाकर और उसी के आधार पर उसके चरित्र की व्याख्या करना पितृसत्ता का स्वभाव बन गया है।यह पितृसत्ता का ही प्रभाव है कि "पुरूष नारी से प्रेम करता है और उससे घृणा भी।"[12].

यह पितृसत्ता स्त्री को देह तक सीमित रख कर उसे बेडरूम की विलास सामग्री में ही विघटित कर देती है।लेखिका कहती भी है कि "प्रेम क्या देह से होता है,मन कुछ नहीं होता।"[13].और जब पुरुष बेडरूम में भी स्त्री की इस काम पिपासा को शांत करने में असक्षम हो जाता है,तो हमारे सामंतवादी पुरुष समाज के गाल पर तमाचा मारती हुई कहानी "नामर्दी की दवा वाया लेडीज़ सर्कल" की निर्मिति

होती है। यहां कहानी में स्त्री उस पुरुष से साथ अपना जीवन काट रही है जो उससे शारीरिक रूप से तृप्त करने में अयोग्य है, क्योंकि वह जानती है कि शारीरिक वासनाओं की पूर्ति ही जीवन का उद्देश्य नहीं है।जीवन तो मनुष्य के संबंधों की हार्दिकता में पलता है।दोनों को भावनात्मक स्तर पर उर्वरक भूमि चाहिए, जहां पर प्रेम का पौधा लहरा सके।संबंधों के होने से ही जीवन की सार्थकता होती है।पात्र "जैनब" भी कहती भी हैं कि, "अलादीन होना किसी का किसी के लिए नहीं होना होता है।वह जिसके पास जाता है उसका सब कुछ खो जाता है।देखते नहीं मेरा मुल्क खो गया है।मैं अलादीन को खोजते खोजते खो गई।इससे कुछ मांगना नहीं,बस इसे अपने पास रखना। रिश्ते,मिलन,जुदाई ऐसे ही अलादीन की तरह होते हैं।उनके होने में ही उनकी सार्थकता होती है।"[14].

इस पूरे कहानी संग्रह में स्त्री-पुरुष,अपनी-अपनी ग्रंथियों से ऊपर उठ रहे हैं।सभी पात्र अपनी रूढ़ियों ,अपनी-अपनी सीमित सोच पर बार-बार प्रश्न चिन्ह लगाकर,उससे मुक्ति पाने की चेष्टा कर रहे हैं।कहानी "सलमा सितारे जड़ी मेरी साड़ी" में नैरेटर यही आत्मालोचन कर रही है।वह अपने द्वारा "पूजा" पात्र का उस उम्र के पड़ाव में अपमान किए जाने पर दुखी है,जब उसके सपने आकाश लांघ लेने के लिए उत्सुक थे।यहां वह खुद इसके लिए प्रायश्चित भी कर रही हैं और इसी को भावना के साथ आगे कहानी "एकांत" में लेखिका "रेचल" बनकर "आशीष-शाल्वी" दोनों को आपस में मिलाने का भी काम कर रही हैं,जो उनकी मनुष्यत्व प्रेम साधना की सहजावस्था है।

आलोचक "विनोद शाही" लिखते हैं" दरअसल,बुनियादी बात यह है कि जिसे हम समय कहते हैं,वह एक सामाजिक उत्पाद है।"[15].हम देखते है कि आज स्त्री-पुरुष दोनों जिन भ्रामक स्थितियों का शिकार हो रहे है,उसमें कहीं न कहीं हमारे समाज मे मौजूद विसंगतियाँ अहम भूमिका निभा रही है।यह संग्रह उन्ही विसंगतियों को परखने और स्वयं के सीमित बोध पर भी प्रश्नचिन्ह लगाने की मांग उठा रहा है।लेडीज़-सर्कल,एक ऐसा सर्कल जहां मनुष्यत्व की नई परिभाषा गढ़ी जाए।

जहां राजवंती, पूजा, शाल्वी, जैनब, कामिनी जैसे स्त्री पात्रों के साथ आकर्ष,सहानी,मुकेश कामिनी का देवर जैसे उदात्त पुरुष पात्र भी हैं,जो अपनी-अपनी मुक्ति तलाशने में जुटे हैं।सभी पात्रों के भीतर एक कब्र बनी हैं;जिसमें उनके अवसाद,पीड़ा, दबी हसरतें,अधूरी चाहतें,तमाम कामयाबी और नाकामयाबी और कुछ अधूरे सपने दबे पड़े हैं,जो प्यार की बारिश का इंतजार कर रहे हैं कि उनके ऊपर भी प्रेम की,संवेदना की बूंदे पड़े और भीतर सूखी हुई जमीन को नमी मिले।

इस कहानी संग्रह में इन्हीं प्रश्नों पर विचार किया गया है कि स्त्री मात्र देह ही नहीं है। उसे भी संपूर्ण मानवीय गरीमा के साथ मनुष्यत्व की इकाई समझा जाए और इस पूरे कहानी संग्रह मे यह संघर्ष,स्त्री के व्यक्तित्व की ओजस्विता प्रदान करता चलता है।"आग और स्त्री का चेहरा परस्पर जुड़े लगते हैं,आग लहकेगी तो चेहरा दमकेगा।"[16].

यह कहानी संग्रह निर्वैयक्तिकता से सामाजिकता के औदात्य की यात्रा है।यहां सभी पात्रों के अंतर्मन में एक दरार है और जैसे ही वह किसी का प्रेमपूर्ण संस्पर्श पाते हैं,तो वह दरार भर जाती है और पात्रों के व्यक्तित्व की संपूर्णता को प्राप्त हो जाते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ :-

1. राकेश बिहारी: भूमंडलोत्तर कहानी, पृ-9.
2. पुरुषोत्तम अग्रवाल: संस्कृति: वर्चस्व और प्रतिरोध, पृ-22.
3. गीताश्री: लेडीज़ सर्कल, पृ-73.
4. रोहिणी अग्रवाल: कथालोचना के प्रतिमान, पृ-119.
5. गीताश्री: लेडीज़ सर्कल, पृ-10.
6. वही. पृ-34.
7. वही. पृ-33.
8. विनोद तिवारी: आलोचना की पक्षधरता, पृ-12.
9. गीताश्री: लेडीज़ सर्कल, पृ-36
10. रोहिणी अग्रवाल: कथालोचना के प्रतिमान, पृ-14.
11. गीताश्री: लेडीज़ सर्कल, पृ-54.
12. अ.प्रभा खेतान, सीमोन द बोउवार: स्त्री उपेक्षिता, पृ-90.
13. गीताश्री: लेडीज़ सर्कल, पृ-102.
14. वही: पृ-48.
15. विनोद शाही: कथा की सैद्धांतिकी, पृ-152.
16. गीताश्री: लेडीज़ सर्कल, पृ-139.